'RESEARCH JOURNEY' International E- Research Journal
Impact Factor - (SJIF) - 6.261, (CIF) - 3.452(2015), (GIF)-0.676 (2013)
Special Issue 183 (B)- Multidisciplinary Issue
UGC Approved Journal
ISSN : 2348-7143
April-2019

हिंदी काव्य साहित्य में राष्ट्रवाद

डॉ. योगिता दत्तात्रय घुमरे (उशिर)
महात्मा गांधी विद्यामंदिर संचालित कला एवं वाणिज्य महाविद्यालय,
येवला, जि. नाशिक

राष्ट्र क्या है? इसका विवेचन राजनीतिशास्त्र का विषय है । किन्तु अगर साहित्य में राष्ट्रवाद को ढूँढना है, तो इस शास्त्र की जानकारी आवश्यक है । साहित्य को समाज का दर्पण कहा जा सकता है । इसी साहित्य में राष्ट्रवाद की झलक पायी जाती है ।

राष्ट्रवाद की अवधारणा स्पष्ट करते हुए इस विचार का अवलोकन करना आवश्यक है । राष्ट्रवाद लोगो के किसी समूह की उस आस्था का नाम है जिसके तहत वे खुद को साझा इतिहास परम्परा, भाषा, जातियता और संस्कृति के आधार पर एकजूट मानते है और इन्ही आधारों पर राष्ट्र की स्थापना की जाती है । यूँ तो राष्ट्र भी एक राज्य ही होता है । परंतु दोनों में विशेष समानता होते हुए भी अन्तर स्पष्ट ही है । राष्ट्र की पदवी उस राज्य को ऊस समय तक प्राप्त नहीं हो सकती जब तक राज्य के निवासियों में परस्पर एक होने की भावना न पाई जाए । यह एकानुभूति की भावना ही राष्ट्रीय भावनाओं की जननी है, जो एक जैसे रहन सहन व्यवहार तथा अन्य क्रिया कलापों द्वारा उत्पन्न होती है और जिसके बिना कोई जनसमूह अथवा राज्य या राष्ट्र नहीं हो सकता । अत: कहा जा सकता है कि, किसी निश्चित भौगोलिक इकाई पर बसा हुआ, जन समुदाय जिसकी अपनी ही सभ्यता तथा संस्कृति हो, अपनी ही भाषा तथा धर्म हो एवं अपनी ही परंपरा हो, वह राष्ट्र है । माना की राष्ट्रवाद का उदय अठराहवीं और उन्नीसवी सदी में युरोप में हुआ था । भारत में राष्ट्रवाद प्राचीन काल से था, लेकिन प्राचीन काल राष्ट्रीयता के अर्थो से सर्वथा अनभिज्ञ रहा हो । भारतीय सभ्यता की स्थापना के मूल में राष्ट्रीय एकता की भावना स्पष्ट रुप में विद्यमान थी । प्राचीन वाङमय इस तथ्य की पुष्टि में असंख्य उदाहरण स्पष्ट करता है ।

आदिकाल राष्ट्रवाद की भावना से ओतप्रोत प्रतित होता है । युद्धों में वीरों का उत्साह बढाने के लिए वीर रस पूर्ण कई रचनाएँ हिंदी साहित्य में दृष्टिगोचर है । अपभ्रंश काल के प्रथम महाकाव्य लेखक 'स्वयंभू' ने आठवी शताब्दी में साहित्य रचना की । 'पउमचरिउ' उनका प्रसिद्ध महाकाव्य है । कवि ने अपने अन्य रचनाओं में वीर रस का स्थान-स्थान पर चित्रण किया है । सामूहिक चेतना को विकास देने हेतू पुष्पदन्त, हेमचन्द्र, विद्यापति, बब्बर आदि कवियों के वर्णन वीरों के रक्त को उत्साहित करने की शक्ति रखते है । रासो साहित्य भी वीरगाथा से भरा पडा है । कहा जाता है, कि "राजनीति और साहित्य का इतने समीप आ जाना हिन्दी साहित्य के इतिहास में प्रथम काल की विशेषता है ।"[१] कवि जहाँ अपने आश्रयदाताओं का गुनगान करते थे, वहाँ समय आने पर राजनीति और युद्धों में भी दौड पडते थे । चन्दबरदाई युद्ध में भाग लेने की आज्ञा माँगते हुए कहते है -

"तीर तुबक सिर पर बहुत, गहत नरिन्द गुमान ।
बरदाई तहाँ तरन को, हुकम माँगि चौहान ।।"[२]

निर्गुण भक्ति का स्त्रोत प्रवाहित करनेवाले कबीर जी ने जात पात के भेदभाव को भूलाकर हिन्दु तथा मुसलमान दोनों को साथ चलने को कहा, 'जात पांत पूछे नहीं कोई, हरि को पूजे सो हरि का होई ।' कबीर के इसी धागे को आगे बढाने वाले नानक, दादू, रैदास आदि संत हुए । जिन्होंने सामन्ती व्यवस्था के विरुद्ध